हास्य-व्यंग्य

एक दवाखाना

प्रो. रशीद अहमद सिद्दीकी

मेरे गाँव में पहले-पहल अस्पताल कायम हुआ। पुरानी बीमारियों को नए नाम दिए गए। पुरानी तकलीफों की जगह नई बीमारियों को लाया गया। पहले जो बेकायदा मरते थे अब बाकायदा मरने लगे।

नए अस्पताल के पहले डॉक्टर साहब मेरे बड़े गहरे दोस्त थे। वे बड़े ज़ोर से हँसते थे। हर काम जल्द किया करते थे। कहते थे, "क्या कहें! चीर फाड़ के मौके नहीं मिलते। काश, कोई ऐसा रास्ता निकल आए कि मलेरिया का इलाज चीरफाड़ से किया जाता।"

नुसखा लिखने के बाद नबज़ देखते। और फिर कहकहा लगाते। मरीज़ समझता कि उन्होंने अपने कहकहे से मरीज़ का दुख भगा दिया। वे हमेशा कहा करते थे, "दवा में कोई असर नहीं होता, सारा असर डॉक्टर में होता है।"

अस्पताल के अमले में एक कम्पाउन्डर साहब थे। खाना कम और पान ज़्यादा खाते थे। कभी-कभी गुनगुनाया भी करते थे। एक मरतबा डॉक्टर साहब ने निहायत ही घन-गरज का कहकहा लगाकर उन से कहा, "भाई! इस महँगे समय में कहकहे लगावो वरना बस टेलीफोन बनकर रह जाओगे।"

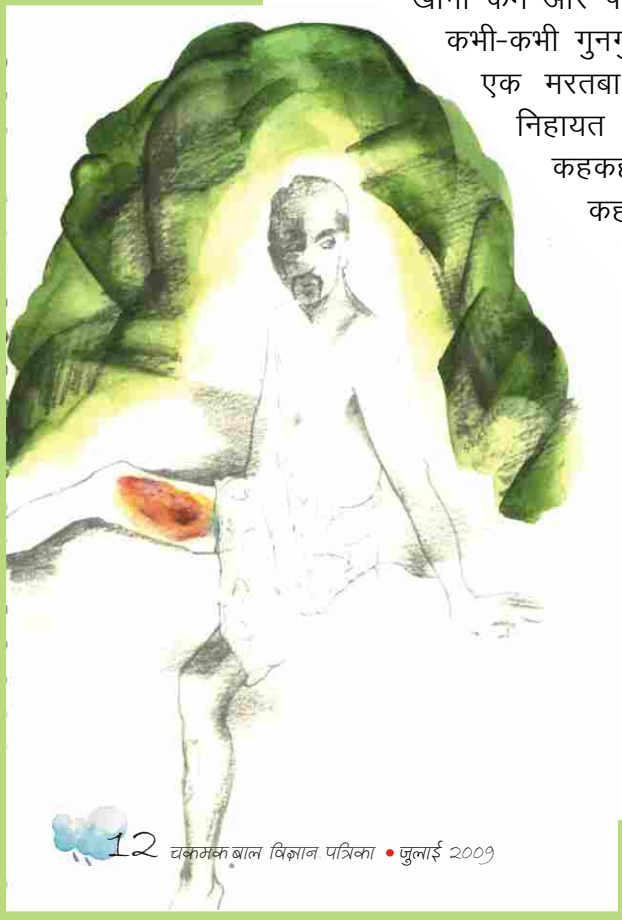

नहीं मालूम, टेलीफोन से डॉक्टर साहब का क्या मतलब था। लेकिन टेलीफोन जिस लहज़े और अदाकारी यानी एकटिंग से उन्होंने कहा, "इसका असर यह हुआ कि कम्पाउन्डर साहब ने कहकहा लगाना तो क्या उस दिन से गुनगुनाना भी बन्द कर दिया था।"

एक और व्यक्ति भी था डाक्टर साहब के अस्पताल में। वह अस्पताल में साफ-सफाई के काम देखता था। वह डॉक्टर साहब को कामों में इस कदर हाथ बँटाता था कि अब उसका दरज़ा अस्पताल के तमाम अमले से ज़्यादा और डॉक्टर साहब से ज़रा-सा ही कम था। उसके चार्ज में एक झाड़ू थी और एक केतली। केतली में नीम की पत्ती उबलती रहती थी। झाड़ू से कूड़ा करकट जमा करके केतली के लिए ईंधन जुगाड़ा जाता।

चीरफाड़ का कोई मरीज़ आ जाता तो डॉक्टर साहब उसे ही आवाज़ लगाते। और फिर वह मरीज़ के पास आता। इमली के दरख्त (जहाँ केतली उबलती रहती थी) की जड़ पर बिठाकर ज़खम का मुआइना किया जाता। फोड़ा नरम न हुआ तो दबा-दबा कर उसे वहीं पोलटिस बना दिया जाता। जो कुछ जख्म से बरामद होता उसे मरीज़ ही के अगौंछे से साफ कर दिया जाता।

इतने में डॉक्टर साहब आ जाते। मरीज़ कराहता, डॉक्टर साहब कहकहा लगाते और उनके वही शागिर्द केतली सम्भाल लेते। डॉक्टर साहब कलोरोफार्म या बेहोशी की दवा सुँघाने के कायल न थे। कहते थे, "भई, कलोरोफार्म झगड़ा ही झगड़ा है। अव्वल तो हाकिम लोग इसका हिसाब माँगते नाक में दम कर देते हैं। इसके अलावा इसका असर बाद में ऐसा खराब पड़ता है और मितली और दर्द की वह शिकायत पैदा होती है कि गँवार लोग डॉक्टर को गदहा समझने लगते हैं। और उनको अँग्रेज़ी दवा से नफरत और बैर हो जाता है।"

तो पेश है क्लोरोफार्म की गैर-मौज़ूदगी में एक मरीज़ का डाक्टर साहब से वास्ता पड़नाः

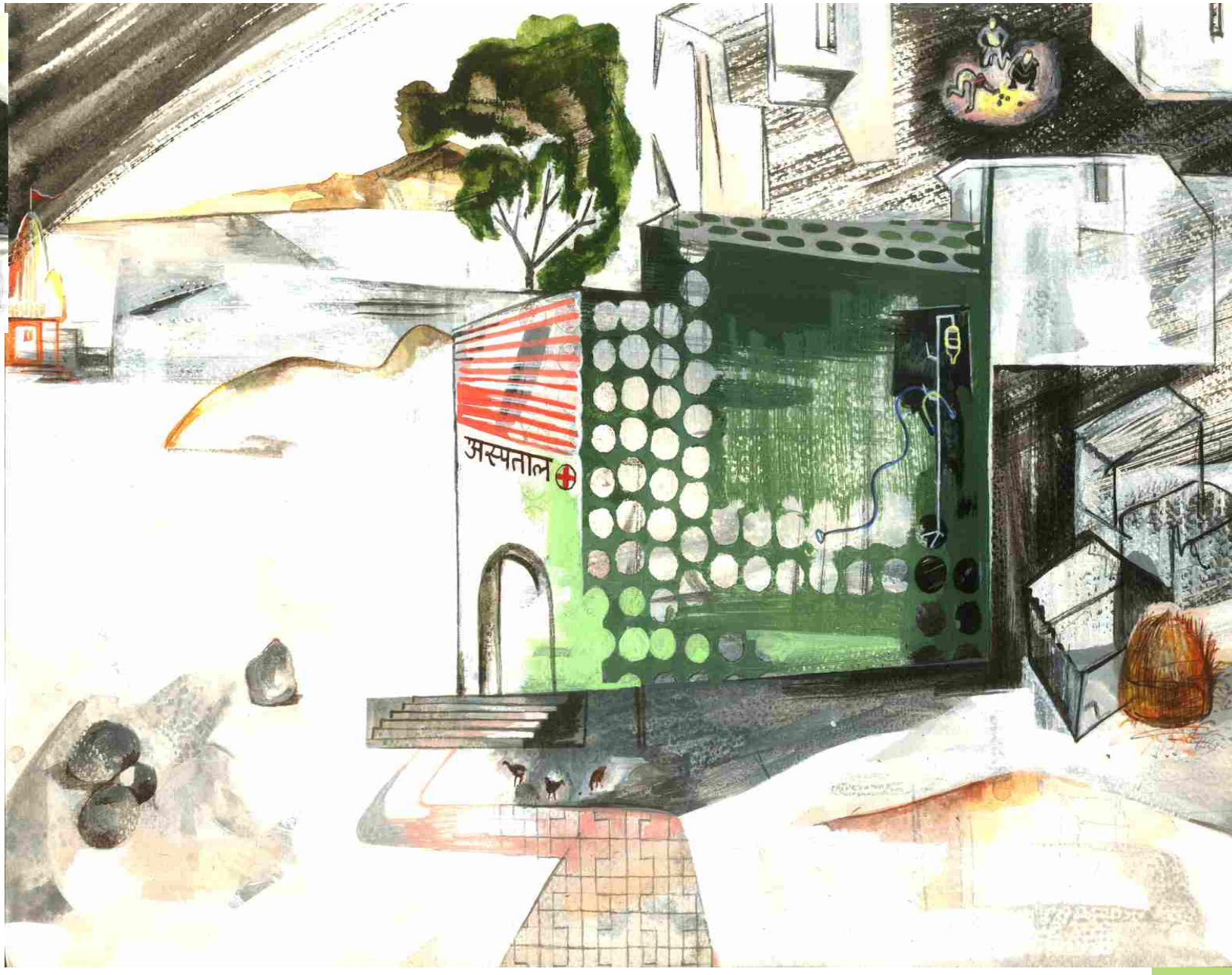

चित्रः शेफाली जैन डिज़ाइनः कनक

मरीज़ की रान में फोड़ा था। डॉक्टर साहब ने बात करते-करते एक कहकहा लगाया। और आनन-फानन उसकी टाँगें अपनी टाँग के शिकंजे में कस लीं। उनके शागिर्द ने मरीज़ के दोनों हाथ पकड़ लिए।

पहले तो मरीज़ मिन्नतें करता रहा और डॉक्टर साहब भी नरम-नरम बातों से उसे तसल्ली देते रहे। और बराबर यही कहते रहे कि फोड़ा देख रहा हूँ कुछ करूँगा नहीं। इतने में जेब से नशतर निकाला। और एक कहकहा लगाकर हाथ मारा तो हाथ और नशतर दोनों फोड़े में तैर गए। मरीज़ ने चीख मारी और उन तमाम गालियों को दोहराया जो वह खेत जोतते वक्त बैलों को देता था। लेकिन डॉक्टर साहब और उनके शागिर्द की गिरफ्त ऐसी थी कि उसे मरीज़ के शरीर का एक रोआँ भी हिल न सका। पास ही केतली रक्खी थी। इसे ज्यों का त्यों ज़खम पर उड़ेल दिया गया। और मरीज़ की पगड़ी से ज़खम बाँध दिया।

डॉक्टर साहब फारिग हुए और एक हल्की-सी चपत मरीज़ को रसीद करके कहकहा लगाते हुए खड़े हुए और बोले, "भाग जाओ, चंगे हो गए। मरीज़ और रिश्तेदारों ने दुआ-दुआ देनी शुरू की।"

जोशाँदे से हाथ और नश्तर धोकर अस्पताल का रास्ता पकड़ा। बाद में ज़खम की ड्रेसिंग उनका शागिर्द करता रहा। डॉक्टर साहब कहा करते थे कि जब तक नीम का जोशाँदा और उनके शागिर्द की मज़बूत गरिफ्त है ज़खम खराब नहीं हो सकता।

अनुवाद - मुहम्मद खलील